Shodh Sangam Patrika
E-ISSN: 3049-0707, Volume 2 | Issue 4 | (Oct – Dec 2025)

शाड्.गंधर संहिता मध्यमखण्ड का समीक्षात्मक विवेचन

डॉ. राजाराम अग्रवाल [1], प्रो. (डॉ.) गोविन्द सहाय शुक्ला [2]
[1] पी.एच.डी. अध्येता, एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष,
स्नातकोत्तर रसशास्त्र एवं भैषज्य कल्पना विभाग,पोस्ट ग्रेजुएट इंस्टिट्यूट ऑफ आयुर्वेद, जोधपुर।
[2] कुलगुरु, डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् राजस्थान आयुर्वेद विश्वविद्यालय, जोधपुर।

सारांश

विश्व की भौतिक उपलब्धियों की आधारशिला निरन्तर अनुसंधान है, जिसमें वाङ्मयात्मक अनुसंधान का विशेष महत्व है। लघुत्रयी में शाड्.गंधरसंहिता का समावेश किया जाता है। शाड्.गंधरसंहिता के मध्यम खण्ड में सर्वप्रथम भैषज्य निर्माण प्रक्रिया से सम्बन्धित परिभाषा-प्रकरण सहित विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है। इसी कारणवश शाड्.गंधरसंहिता भैषज्य कल्पना के आधार-स्तम्भ के रूप में प्रतिष्ठित है। इस लेख का मुख्य उद्देश्य मध्यम खण्ड में वर्णित दस अध्यायों का वैज्ञानिक दृष्टिकोण से विवेचन करना तथा उनमें वर्णित विभिन्न कल्पनाओं के वैशिष्ट्य का प्रतिपादन करते हुए उनका समीक्षात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करना है।

संकेत शब्द: शाड्.गंधरसंहिता, मध्यम खण्ड, औषध कल्पना, वैज्ञानिक निरुपण, वैशिष्ट्य

प्रस्तावना

अनादि काल से ज्ञान का प्रवाह अनवरत रुप से चलता आ रहा है। प्रकृति के प्रादुर्भाव के साथ ही आयु के संरक्षण एवं संवर्धन हेतु आयुर्वेद का शाश्वत ज्ञान मानव कल्याण के लिए निरंतर प्राप्त होता रहा है। प्रारम्भ में ज्ञान-प्राप्ति में श्रुति-परम्परा की प्रधानता रही, किन्तु कालान्तर में प्राणिमात्र के शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य की रक्षा तथा व्याधि-निवारण हेतु आयुर्वेद चिकित्सा-विधा का लिपिबद्ध स्वरुप विकसित होने लगा। वेद समस्त ज्ञान के मूल हैं। तत्पश्चात् वेदों के साथ-साथ उपनिषदों, ब्राह्मण ग्रन्थों तथा कालान्तर में रचित अन्य संहिताओं में भी स्वास्थ्य से सम्बन्धित विषयवस्तु का विस्तृत विवेचन प्राप्त होता है। शारीरिक एवं मानसिक रुप से स्वस्थ व्यक्ति के द्वारा ही पुरुषार्थ-चतुष्ट्य की प्राप्ति संभव है, और यह स्वास्थ्य संरक्षण आयुर्वेद के माध्यम से ही संभव है। इसी कारण आयुर्वेद का अन्य चिकित्सा पद्धतियों में विशिष्ट स्थान है।

कालान्तर में आयुर्वेदीय साहित्य को विद्वानों द्वारा स्थूल रुप से बृहत्रयी एवं लघुत्रयी में विभक्त किया गया। बृहत्रयी (चरकसंहिता, सुश्रुतसंहिता, अष्टाङ्गहृदय) में भैषज्य कल्पना से सम्बन्धित विषयवस्तु यत्र-तत्र विकीर्ण रुप में प्राप्त होती है, जबकि लघुत्रयी (शाड्.गंधरसंहिता, भावप्रकाश एवं माधवनिदान) में विशेष रुप से शाड्.गंधरसंहिता में आधारभूत पंचविध कषाय कल्पनाएँ, अन्य द्वितीयक कल्पनाएँ तथा भैषज्य कल्पना से सम्बन्धित महत्वपूर्ण विषय प्रथम खण्ड एवं उत्तर खण्ड में संक्षिप्त रुप में तथा मध्यम खण्ड में विस्तृत एवं सुव्यवस्थित रुप में वर्णित हैं।

शाड्.गंधरसंहिता का परिचय

शाड्.गंधरसंहिता लघुत्रयी में प्रमुख रुप से परिगणित संहिता है। इस ग्रन्थ का रचनाकाल 13वीं शताब्दी का पूर्वार्ध माना जाता है। इसके रचयिता शाकम्भरी देश के चौहान वंशीय हमीर नरेश के गुरु राघवदेव के पौत्र एवं दामोदर के पुत्र आचार्य शाड्.गंधर हैं। स्वयं आचार्य शाड्.गंधर के अनुसार, उन्होंने अपने ग्रन्थ में मूलतः अन्य ऋषियों द्वारा प्रतिपादित योगों का ही संकलन किया है।

13वीं शताब्दी के पूर्वार्ध में आचार्य शाड़्.र्गधर ने अपने से पूर्व उपलब्ध आयुर्वेदीय एवं आयुर्वेदतर ग्रन्थों का सम्यक् अध्ययन एवं सूक्ष्म निरीक्षण कर एक सुव्यवस्थित एवं नवीन परम्परा युक्त संहिता की रचना की। इस संहिता में रसशास्त्र एवं भैषज्य कल्पना से सम्बन्धित विषयवस्तु विशेष रूप से उपलब्ध होती है, साथ ही आयुर्वेद से सम्बन्धित अन्य विषयों का भी समावेश किया गया है। शाड़्.र्गधरसंहिता के मध्यम खण्ड में भैषज्य कल्पना से सम्बन्धित विषयवस्तु की प्रधानता स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है।इस संहिता में तत्कालीन प्रवृत्तियों एवं विचारों का समावेश होने के कारण इसे मध्यकालीन युग का प्रतिनिधि ग्रन्थ माना जाता है। इस काल में आयुर्वेद चिकित्सोपयोगी अनेक औषध द्रव्यों तथा नवीन कल्पनाओं का प्रादुर्भाव हुआ। संहितोक्त चिकित्सा के साथ-साथ रसौषधियों का प्रयोग भी चिकित्सा पद्धति में व्यापक रूप से होने लगा तथा अनेक नवीन कल्पनाएँ व्यवहार में आईं।

अतः आचार्य शाड़्.र्गधर द्वारा रचित यह संहिता प्राचीन संहिताओं से भिन्न एक नवीन स्वरूप में आयुर्वेद को जनसामान्य के लिए प्रस्तुत करती है। सामान्य बुद्धि वाले व्यक्तियों के लिए आयुर्वेद को सरल एवं सहज रूप में समझाने हेतु आवश्यक सभी पक्षों एवं सिद्धान्तों को इस संहिता में महत्त्व दिया गया है। इन्हीं कारणों से यह संहिता अल्पकाल में ही अत्यधिक लोकप्रिय हुई। यह ग्रन्थ 'गागर में सागर' की लोकोक्ति को चरितार्थ करता हुआ आयुर्वेद की प्राचीन एवं कुछ नवीन विद्याओं के समन्वय का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करता है।

टीकाओं का परिचय

किसी भी विषय से सम्बन्धित मूल संहिता को अधिक स्पष्ट एवं सुग्राही बनाने के लिए समय-समय पर परवर्ती आचार्यों द्वारा उस पर अनेक टीकाएँ लिखी जाती रही हैं, जो संहिता को युगानुरूप संदर्भ में स्पष्ट करती हुई नवीन स्वरूप प्रदान करती हैं। इसी संदर्भ में शाङ्गधरसंहिता पर भी परवर्ती आचार्यों द्वारा संस्कृत एवं हिन्दी में लिखी गई अनेक टीकाएँ उपलब्ध हैं, जिनका विवरण निम्नानुसार है-

1. दीपिका- आढमल्ल कृत
2. गूढार्थदीपिका- काशीराम कृत
3. आयुर्वेददीपिका- रुद्रभट्ट कृत
4. बोपदेव कृत टीका
5. शाड़्.र्गधर शारीर टीका

इनमें से शाड़्.र्गधरसंहिता की आचार्य परशुराम शास्त्री द्वारा सम्पादित तथा निर्णय सागर प्रेस, मुम्बई द्वारा प्रकाशित संस्कृत संस्करण में दो प्रमुख टीकाएँ उपलब्ध हैं- आचार्य आढमल्ल द्वारा रचितदीपिका टीका एवं आचार्य काशीराम द्वारा रचित गूढार्थदीपिका टीका, जिन्हें प्रामाणिक माना जाता है। शाड़्.र्गधरसंहिता की लोकप्रियता का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि बोपदेव जैसे विद्वान् ने भी इस ग्रन्थ पर टीका लिखी तथा हेमाद्रि ने भी अपने ग्रन्थों में इसका उद्धरण किया है। इसके अतिरिक्त शाड़्.र्गधरसंहिता के हिन्दी, गुजराती, मराठी एवं बांग्ला अनुवाद भी विभिन्न प्रादेशिक क्षेत्रों में अत्यधिक प्रचलित रहे हैं।

मध्यम खण्ड में रसशास्त्रीय एवं भैषज्य कल्पनात्मक वैशिष्ट्य

शाड़्.र्गधरसंहिता का आयुर्वेद में चिकित्सा एवं भैषज्य कल्पना की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसमें भेषज-निर्माण से सम्बन्धित मुख्य पंचविध कषाय कल्पनाओं तथा अन्य उपकल्पनाओं का विस्तृत एवं वैज्ञानिक वर्णन निर्माण-विधियों तथा सोदाहरण प्रयोग-विधि सहित प्राप्त होता है। शाड़्.र्गधरसंहिता तीन खण्डों-प्रथम खण्ड, मध्यम खण्ड एवं उत्तर खण्ड-में विभक्त है, जिसमें कुल 32 अध्याय तथा लगभग 2600 श्लोक समाहित हैं। शाड़्.र्गधरसंहिता के मध्यम खण्ड का संक्षिप्त विवरण निम्नानुसार है।

सारणी संख्या 1 - शाड्.गंधरसंहिता मध्यम खण्ड कुल 12 अध्याय एवं 1276 सूत्र का विवरण

अध्याय संख्या	अध्याय नाम	सूत्र संख्या
प्रथम अध्याय	स्वरस कल्पना	42 सूत्र
द्वितीय अध्याय	क्वाथ कल्पना	174 सूत्र
तृतीय अध्याय	फाण्ट कल्पना	12 सूत्र
चतुर्थ अध्याय	हिम कल्पना	8 सूत्र
पंचम अध्याय	कल्क कल्पना	28 सूत्र
षष्ठ अध्याय	चूर्ण कल्पना	164 सूत्र
सप्तम अध्याय	गुटिका कल्पना	105 सूत्र
अष्टम अध्याय	लेह कल्पना	48 सूत्र
नवम अध्याय	स्नेह कल्पना	210 सूत्र
दशम अध्याय	सन्धान कल्पना	92 सूत्र
एकादश अध्याय	धातु शोधन-मारण	104 सूत्र
द्वादश अध्याय	रस-रसायन कल्पना	289 सूत्र

अतः शाड्.गंधरसंहिता भैषज्य कल्पना का एक सुव्यवस्थित एवं वैज्ञानिक ग्रन्थ है। इसलिए इस लेख का मुख्य प्रयोजन भैषज्य कल्पना के संदर्भ में शाड्.गंधरसंहिता (मध्यम खण्ड) का अवलोकन कर भैषज्य कल्पना के सिद्धान्तात्मक पक्ष के महत्त्व को अधिक स्पष्ट रूप में आयुर्वेद के अभ्यासकों के समक्ष प्रस्तुत करना है।

अध्याय–1 : स्वरसादि कल्पना

शाड्.गंधरसंहिता के मध्यम खण्ड के प्रथम अध्याय में पंचविध कषाय कल्पना का सर्वत्र सामान्य रूप से बलाबल के आधार पर वर्णन किया गया है तथा स्वरस कल्पना का विस्तारपूर्वक एवं वैज्ञानिक ढंग से विवेचन प्रस्तुत किया गया है। ताजा औषध द्रव्यों को पीसकर वस्त्र से निचोड़कर प्राप्त रस को स्वरस कहा गया है। शाड्.गंधरसंहिता में स्वरस हेतु संगृहीत औषधि की विशिष्टता को प्रतिपादित करते हुए ‘आहतात्’ पाठ का उल्लेख किया गया है। शुष्क द्रव्यों में जलीय अंश का ह्रास हो जाता है, अतः शुष्क औषध द्रव्यों को कूटकर आठ गुना जल में अग्नि पर साधित कर, चतुर्थांश शेष रहने पर वस्त्रपूत कर स्वरस के समान ग्रहण करने का विधान बताया गया है। शाड्.गंधरसंहिता में आद्र द्रव्यों से प्राप्त स्वरस को गुरु होने के कारण अर्द्ध-पल प्रमाण में तथा निशोषित एवं अग्निसिद्ध स्वरस को अपेक्षाकृत लघु होने के कारण एक पल प्रमाण में ग्रहण करने का निर्देश दिया गया है। मधु, मिश्री, यवक्षार, जीरक, सैन्धव लवण, घृत, तैल एवं चूर्ण को कोल-मात्रा में प्रक्षेपित कर स्वरस का सेवन करना चाहिए।

सारणी संख्या 2 - स्वरस कल्पना के रोगानुसार आमयिक प्रयोग

रोग	स्वरस / योग
प्रमेह	गुडूची स्वरस + मधु
	आमलकी स्वरस + हरिद्रा चूर्ण + मधु
रक्तपित्त	वासा स्वरस + मधु
कामला	त्रिफला + दार्वी + निम्बपत्र + गुडूची स्वरस + मधु
विषमज्वर	तुलसी + द्रोणपुष्पी स्वरस + काली मिर्च
रक्तातिसार	जम्बु + आम्र + आमलकी पत्र स्वरस + मधु + अजाक्षीर
सर्वातिसार	बबूल पत्र + श्योनाक त्वक् + कुटज त्वक्
वृषणवात, श्वास, कास, अरुचि, प्रतिश्याय	आर्द्रक स्वरस

कल्क से स्वरस निकालने हेतुपुटपाक विधिका वर्णन किया गया है तथा एक घड़ी की काल-सीमा के स्थान पर लेप की अंगारवर्णता को पुटपाक सिद्धि का लक्षण बताया गया है। पुटपाक स्वरस को एक पल की मात्रा में एक कर्ष मधु मिश्रित कर सेवन करना चाहिए।

अध्याय–2 : क्वाथादि कल्पना

स्वरसादि कल्पना के उपरान्त क्वाथ कल्पना का वर्णन किया गया है। समान प्रमाण में औषध द्रव्यों को ग्रहण कर, द्रव्य से सोलह गुणा जल मिलाकर मिट्टी के पात्र में मन्दाग्नि पर पाक करते हुए अष्टमांश अवशिष्ट रहने पर छानकर रोगी को निवात स्थान में सुखोष्ण पान कराने की विधि कोक्वाथ कल्पना कहा गया है। श्रुत, क्वाथ, कषाय एवं निर्यूह-क्वाथ के पर्याय बताए गए हैं। क्वाथ में जीरक, गुग्गुलु, यवक्षार, लवण, शिलाजीत, हींग एवं त्रिकटु को शाण प्रमाण में प्रक्षेपित करने का निर्देश दिया गया है। द्रव प्रक्षेप-यथा क्षीर, घृत, गुड़, मूत्र एवं कल्क-की मात्रा एक कर्ष प्रमाण लेने का विधान बताया गया है। क्वाथ की मात्रा दो पल बताई गई है।

सारणी संख्या 3 - क्वाथ कल्पना के दोषानुसार प्रक्षेप

रोग	क्वाथ में मधु (प्रक्षेप)	क्वाथ में शर्करा (प्रक्षेप)
वातज	1/16 भाग	1/4 भाग
पित्तज	1/8 भाग	1/8 भाग
कफज	1/4 भाग	1/16 भाग

सारणी संख्या 4 - स्वरस कल्पना के रोगानुसार आमयिक प्रयोग

पर्पटादि क्वाथ	पित्तज ज्वर
पंचभद्रादि क्वाथ	वातपित्तज ज्वर
अमृताष्टक क्वाथ	पित्तकफज ज्वर
दशमूल क्वाथ	सन्पातिक ज्वर
अष्टदशांग क्वाथ	सन्पातिक ज्वर , पाश्र्व शूल
गुडूची क्वाथ	जीर्ण ज्वर

अध्याय–3 : फाण्टादि कल्पना

एक पल औषध को उचित प्रकार से कूटकर एक कुडव उष्ण जल में डाल दिया जाता है। तत्पश्चात् उसे हाथों से मसलकर कपड़े से छानकर प्राप्त औषध-जल को फाण्ट संज्ञा दी गई है। चूर्ण-द्रव को फाण्ट का पर्याय बताते हुए दो पलमान में सेवन का निर्देश दिया गया है तथा सिता, मधु एवं गुड़ आदि के प्रक्षेप का विधान क्वाथवत् बताया गया है। मन्थ भी फाण्ट का एक ही भेद है, किन्तु कुछ विशेषताओं के कारण इसका पृथक् वर्णन किया गया है। मन्थ को भी दो पलमान में सेवन करने का निर्देश दिया गया है।

सारणी संख्या 5 - फाण्ट एवं मन्थ कल्पना के रोगानुसार औषधिय प्रयोग

बृहतमधूकपुष्पादि फाण्ट	ज्वर, पिपासा, छर्दि, अतिसार	खर्जूरादि मन्थ	मदात्यय
आम्रादि फाण्ट	ज्वर	मसूरादि मन्थ	छर्दि
लघुमधूकपुष्पादि फाण्ट	तृष्णापित्तहर, दाह, मूर्च्छा	यवसक्तु मन्थ	तृष्णा, दाह,

अध्याय–4 : हिमनिर्माणादि कल्पना

एक पल औषधि को पेषित कर छः पल जल में चार प्रहर तक रखने के उपरान्त प्रातः हाथ से मथकर एवं वस्त्र-गालित कर फाण्ट के समान आठ तोला पान करना चाहिए। शीतकषाय को भी हिम का पर्याय बताया गया है। हिम की मात्रा भी फाण्ट के समान दो पलबताई गई है तथा प्रक्षेप-मान भी फाण्ट के समान ही वर्णित किया गया है।

सारणी संख्या 6 - हिम कल्पना के रोगानुसार औषधिय प्रयोग

आम्रादि हिम	रक्तपित्त	गुडूच्यादि हिम	जीर्णज्वर
मरिच्यादि हिम	तृष्णा, छर्दि	वासा हिम	रक्तपित्त
नीलोत्पलादि हिम	ज्वर, प्रलाप, छर्दि, भ्रम, मोह	धान्यक हिम	अन्तर्दाह

		धान्यकादि हिम	रक्तपित्त, ज्वर, दाह, तृष्णा

अध्याय–5 : कल्क कल्पना

ताजा औषधि को जल के साथ अथवा शुष्क औषधि को चार बार जल मिलाकर शिला पर पीसने से प्राप्त द्रव्य को कल्क संज्ञा दी गई है। प्रक्षेप एवं आवाप को कल्क के पर्याय रुप में बताया गया है। कल्क को एक कर्षमात्रा में सेवन करना चाहिए।

प्रक्षेप-मात्रा के रुप में मधु, घृत तथा तैल को कल्क से द्विगुण मात्रा में प्रक्षेपित करने, शर्करा तथा गुड़ को कल्क के सममात्रा में तथा पानार्थ द्रव को कल्क से चतुर्गुण मात्रा में ग्रहण करने का विधान बताया गया है।

सारणी संख्या 7 - कल्क कल्पना के रोगानुसार औषधिय प्रयोग

निम्बपत्र कल्क	व्रण शोधन-रोपण	विष्णुक्रान्ता कल्क	परिणामशूल
महानिम्ब कल्क	गृध्रसी	शुण्ठी कल्क	परिणामशूल, आमवात
रसोन कल्क	वातव्याधि, विषमज्वर	अपामार्ग कल्क/ तिल कल्क/ नागकेशर कल्क	रक्तार्श
पिप्पल्यादि कल्क	उरुस्तम्भ	बदरीमूल कल्क	रक्तातिसार

अध्याय–6 : चूर्ण कल्पना

शुष्क औषध द्रव्यों को पेषण करने के उपरान्त वस्त्र-गालित कर प्राप्त सूक्ष्म स्वरुप को वैद्य चूर्ण कहते हैं। औषध चूर्ण को एक तोला मात्रा में सेवन करना चाहिए। शाङ्.र्गधरसंहिता में रज एवं क्षोद को चूर्ण के पर्याय बताया गया है। चूर्ण में प्रक्षेप-मान के रुप में गुड़ को सम मात्रा, शर्करा को द्विगुण मात्रा में तथा हिङ्गु को भर्जित कर अष्टमांश भाग में प्रक्षेपित करने का विधान बताया गया है। कच्ची, अर्थात् अभर्जित हिङ्गु का प्रयोग करने पर वह उत्क्लेद कारक एवं देह में खेदकारक होती है। चूर्ण का लेहन करने हेतु तैल, घृत आदि को चूर्ण से द्विगुण मात्रामें तथा पान करने हेतु चतुर्गुण द्रव में आलोडित करने का निर्देश दिया गया है। शाङ्.र्गधरसंहिता में वात्तिक, पैत्तिक तथा कफज रोगों में क्रमशः तीन, दो तथा एक पल अनुपान देने का उपदेश दिया गया है।

सारणी संख्या 8 - चूर्ण कल्पना के रोगानुसार औषधिय प्रयोग

चूर्ण का नाम	**उपयोग / रोग**	**चूर्ण का नाम**	**उपयोग / रोग**
बृहत्कट्फलादि चूर्ण	ऊर्ध्वजत्रुगत रोग, शिरोरोग	नाराच चूर्ण	आध्मान
कपित्थाष्टक चूर्ण	गलायमान, अतिसार	महाखाण्डव चूर्ण	अरुचि
दाडिमाष्टक चूर्ण (लघु / बृहत)	अतिसार, कास, ज्वर, गलरोग	नारायण चूर्ण	उदररोग, दुष्टरोगगणापहम

पिप्पल्यादि / जातिफलादि चूर्ण	ग्रहणी	पंचसम चूर्ण	शूल, आमवात
लवणत्रितय चूर्ण	यकृत एवं प्लीहा रोग	वडवानल चूर्ण	मन्दाग्नि

अध्याय–7 : वटक कल्पना

चूर्ण कल्पना अध्याय के उपरान्तगुटिका-अधिकार का वर्णन किया गया है। वटी कल्पना के पर्याय के रूप में गुटिका, वटी, मोदक, वटक, पिण्डी तथा वर्त्तीआदि शब्दों का प्रयोग किया गया है। गुड़, मिश्री, खाण्ड तथा गुग्गुलु को अग्नि पर पाक कर उसमें औषध चूर्ण को भली-भाँति मिलाकर, अथवा मधु-संप्लावन या जल के माध्यम से गुटिका का निर्माण करना चाहिए। औषधि से चतुर्गुण शर्करा अथवा द्विगुण गुड़ मिलाकर अग्निसिद्धि द्वारा गुटिका का निर्माण करने का विधान बताया गया है। गुग्गुलु तथा मधु को औषध चूर्ण के समान मात्रा में ग्रहण कर वटी का निर्माण किया जाता है। औषध चूर्ण से द्विगुण मात्रामें द्रव मिलाकर मोदक का निर्माण भी किया जा सकता है। गुटिका-सेवन की सामान्य मात्रा एक तोला बताई गई है, किन्तु रोगी के बलाबल के अनुसार वटी की मात्रा का निर्धारण करना चाहिए।

सारणी संख्या 9 - वटी कल्पना के रोगानुसार औषधिय प्रयोग

बहुशाल गुड	अर्श
संजीवनी वटी	सन्निपातिक ज्वर, आमाजीर्ण
सूरण वटक	अर्श, ग्रहणी
मरिचादि गुटिका	कास
व्योषादि गुटिका	पीनस, श्वास, कास
मण्डूर वटक	कामला

अध्याय–8 : अवलेह कल्पना

क्वाथादि के पुनः पाक के माध्यम से तैयार किए गए गाढ़े पदार्थ अथवा घनत्व-प्राप्त अवस्था को रसक्रिया तथा अवलेह कहा गया है। अवलेह का सामान्यतः एक पलमात्रा में सेवन बताया गया है। साथ ही सिता एवं गुड़ को क्रमशः चूर्ण से चतुर्गुण एवं द्विगुण मात्रा में तथा चतुर्गुण द्रवग्रहण करने का उपदेश दिया गया है।

सारणी संख्या 10 - अवलेह कल्पना के रोगानुसार औषधिय प्रयोग

कण्टकारी अवलेह	कास, श्वास
च्यवनप्राश अवलेह	क्षतक्षीण, शोष, हृदरोग, कास, श्वास
कूष्माण्ड अवलेह	रक्तपित्त, क्षय, ज्वर, शोष, तृष्णा

अगस्तय हरितकी अवलेह	क्षय, कास, ज्वर, श्वास, सर्वरोग प्रणाशन
कुटज अवलेह	अर्श, ग्रहणी, अतिसार, पाण्डु रोग

अध्याय–9 : घृत-तैल कल्पना

आर्द्र औषधि को पेषित कर उसका स्वरस निकाल लिया जाता है अथवा चूर्ण से चतुर्गुण जल मिलाकर उसका क्वाथ किया जाता है। चतुर्थांश शेष रहने पर इसे छानकर पुनः कड़ाही में धारण किया जाता है। औषधि से चतुर्गुण घृत अथवा तैल इस क्वाथ में लेकर पाक किया जाता है तथा चूर्ण से चतुर्गुण दुग्धक्वाथ में धारण कर मंदाग्नि पर पाक किया जाता है। केवल घृत अथवा तैल शेष रहने पर इस सिद्ध घृत अथवा तैल को एक भाण्ड में सुरक्षित रखकर मुद्रा लगा दी जाती है। सिद्ध स्नेह की मात्रापल-मानमें ग्रहण करने का उपदेश भी दिया गया है।

शाड्.र्गधरसंहिता में स्नेह-पाक में प्रयुक्त मृदु, मध्यम तथा कठिन द्रव्यों से सिद्ध क्वाथ हेतु भिन्न-भिन्न मात्रा में जल ग्रहण करने का विधान बताया गया है। इस क्रम में मृदु द्रव्य में चतुर्गुण जल, मध्यम तथा कठिन द्रव्यों में अष्टगुण जलतथा अत्यन्त कठिन द्रव्यों में षोडशगुण जल द्वारा क्वाथ सिद्ध कर स्नेह कल्पना में प्रयोग करने का उपदेश दिया गया है। शाड्.र्गधरसंहिता में जल, क्वाथ तथा स्वरस से पृथक्-पृथक् सिद्ध करने पर क्रमशः चतुर्थांश, षष्ठांश तथा अष्टमांश कल्कधारण करने का उपदेश किया गया है। केवल कल्क द्रव्य से स्नेह-साधन हेतु कल्क द्रव्य को चतुर्गुण जलद्वारा पेषित करने का निर्देश दिया गया है।

घृत-तैल पाक परीक्षा में स्नेह-कल्क को अंगुली से पीड़ित करने परवर्त्ति के समान रचना होने तथा इस वर्त्ति को अग्नि पर डालने पर शब्दहीन होकर जलने पर स्नेह-सिद्धि समझनी चाहिए। इसके साथ ही फेन-शान्तिपर घृत-सिद्धि तथा फेनोत्पत्ति पर तैल-सिद्धि प्राप्त होने की कर्तव्यता का निर्धारण किया गया है। मृदु, मध्य तथा खर पाक के अतिरिक्त, खर से अधिक पाक होने पर दग्ध पाक का भी उल्लेख किया गया है तथा इस दग्ध पाक को दाहकर एवं निष्प्रयोजन बताया गया है।

सारणी संख्या 11 - स्नेह कल्पना के रोगानुसार औषधिय प्रयोग

घृत /तैल कल्पना	रोगाधिकार	घृत /तैल कल्पना	रोगाधिकार
क्षीरषट्पल घृत	विषमज्वर, प्लीहा, मन्दाग्नि	बिन्दु घृत	जलोदर, गुल्म
चांगेरी घृत	ग्रहणी, अतिसार	गौराद्य घृत	विष हरं परं
लाक्षादि तैल	विषमज्वर	निम्बबीज तैल	पालित्य
अड्.गारक तैल	सर्वज्वर	यष्टिमधु तैल	केश, शमश्रु घने
नारायण तैल	वातरोग	नीलिकाद्य तैल	पलित, केश स्थिर

अध्याय–10 : आसव–अरिष्ट कल्पना

द्रव को चिरकाल तक संधान हेतु रखने पर भेषजोचित कल्पना की आसव तथा अरिष्ट संज्ञा होना बताया गया है।

अपक्व औषधि के जल से सिद्ध मद्य को आसव तथा क्वाथ द्वारा सिद्ध मद्य को अरिष्ट संज्ञा दी गई है। आसव–अरिष्ट कल्पना का पानार्थ प्रमाण जलपान के समान बताया गया है। अनुक्त-मान होने पर मधु को गुड़ से अर्ध मानमें तथा प्रक्षेप दशमांश ग्रहण करने का उपदेश दिया गया है।

सारणी संख्या 12 - संधान कल्पना की विभिन्न कल्पनाओं का संक्षिप्त वर्णन

आसव	अपक्वौषधाम्बुभ्यां सिद्धं
अरिष्ट	क्वाथसिद्धम्
शीतरससीधु	अपक्वमधुरद्रव्यसंधान
पक्वरससीधु	संपक्वमधुरद्रव्यसंधान
सुरा	परिपक्वान्नसंधानसमुत्पन्नां
वारुणी	ताल, खर्जूररससंधिता
शुक्त	कन्दमूलफलानिस्नेहलवण डाल कर संधान
चुक्र	मद्ययमधुरद्रवकाविनिष्ट होकर अम्ल संधान करना
तुषाम्बु	आम ; कच्चे द्ध विदलितैयवसंधान
सौवीर	निस्तुषैयव को पकाकर संधान करना
कान्जिक	कुलमाष और धान्य के माण्ड को संधान करने से बना खट्टा द्रव्य
संडाकी	मूलक और सर्षप आदि से संधान

सारणी संख्या 13 - संधान कल्पना के रोगानुसार औषधिय प्रयोग

पिप्प्ल्यासव	क्षयरोग,गुल्म, उदररोग	लोहासव	पाण्डु
मृद्वीकारिष्ट	अर्श, दीपन	कुटजारिष्ट	ज्वर
विड्.गारिष्ट	विद्रधि, उरुस्तम्भ	खदिरारिष्ट	सर्वकुष्ठनिवारण/ शीतपित्त
द्राक्षारिष्ट	बलकृतमलशोधनं, यक्ष्माधिकार	रोहितकारिष्ट	अर्श, ग्रहणी

अध्याय–11 : धातुशोधन-मारण कल्पना

शाड्.गंधरसंहिता में स्वर्ण, रजत, ताम्र, पित्तल, नाग, वंग तथा लौह-इन सात धातुओं को अंग-स्वरुप बताया गया है। धातुओं के सामान्य शोधन हेतु स्वर्ण से लौह तक की धातुओं के पत्र को अग्नि में तपाकर तिल-तैल में बुझाया जाता है। इस प्रकार तैल में तीन बार निर्वापित करने के पश्चात् क्रमशः तीन-तीन बार तक्र, कांजी, गौमूत्र तथा

कुलत्थ-क्वाथ में निर्वापित करने से धातुएँ शुद्ध हो जाती हैं। नाग एवं वंग की भी अन्य धातुओं के समान शुद्धि करने के पश्चात् अर्क-दुग्ध में विशिष्ट शुद्धि हेतु तीन बार निषेचन का विधान बताया गया है। स्वर्णमाक्षिक, तुत्थ, अभ्रक, अंजन, मनःशिला, हरताल तथा रसक-ये सात उपधातुएँ हैं।

अध्याय–12 : रसादि शोधन-मारण कल्पना

पारद को सभी रोगों का नाश करने वाला तथा देह में कान्ति एवं पुष्टि प्रदान करने वाला बताया गया है। सिद्ध वैद्य द्वारा शुद्ध किए जाने पर यह पारद आभा युक्त हो जाता है। शाड्.र्गधरसंहिता में शुभ दिन में रस-साधन करने पर पारद को देह-सिद्धि एवं लौह-सिद्धि कारक बताया गया है। पारद एवं गन्धक की शोधन तथा मारण विधियों का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है। पारद-मुखकरण के लिए कालकूट, वत्सनाभ, श्रृंगक, प्रदीपक, हलाहल, हारिद्रक, ब्रह्मपुत्र, सक्तुक तथा सौराष्ट्रिक-विषाद उत्पन्न करने वाले ये नौ विष बताए गए हैं। उपविष के रूप में अर्क, धत्तूर, लांगली, स्नुही, करवीर, गुंजा तथा अहिफेन-इन सात उपविषों का उल्लेख विद्वानों द्वारा किया गया है। गन्धक के जारण हेतु कच्छप यंत्र का वर्णन किया गया है तथा अन्त में विभिन्न रोगों में प्रयुक्त औषधीय योगों का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

उपसंहार

विश्व की भौतिक उपलब्धियों की आधारशिला निरन्तर अनुसंधान है, जिसमें वाङ्मयात्मक अनुसंधान का विशेष महत्व है। आयुर्वेद में सभी अनुसंधानों का मुख्य आधार वाङ्मय ही है। संहिता-क्रम में 13वीं शताब्दी में आचार्य शाड्.र्गधर द्वारा प्रणीत शाड्.र्गधरसंहिता भैषज्य कल्पना का एक आधारभूत ग्रन्थ है। सरल एवं व्यवहारोपयोगी होने के कारण आयुर्वेद-जगत में इसे अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जाता है। अतः इसकी विषयवस्तु सरल एवं व्यावहारिक है। मध्यम खण्ड इस संहिता का दूसरा प्रभाग है, जिसमें कुल 12 अध्याय सम्मिलित हैं। इसमें पंचविध कषाय कल्पना तथा द्वितीय व्युत्पन्न कल्पनाओं का सर्वप्रथम सुव्यवस्थित एवं वैज्ञानिक विधि से उदाहरण सहित वर्णन प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त धातुओं के शोधन-मारण, अनेक रसौषधियों के निर्माण एवं प्रयोग का भी उल्लेख किया गया है। रसशास्त्रीय एवं भैषज्य कल्पनात्मक विशेषताओं को भली-भाँति समझने हेतु इस आधारभूत ग्रन्थ का सम्यक् पठन-पाठन अत्यन्त आवश्यक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी, शाड्.र्गधरसंहिता (हिन्दी व्याख्या), चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, पुनर्मुद्रित संस्करण 2001, मध्यम खण्ड, पृष्ठ संख्या 125–320।
2. शैलजा श्रीवास्तव, शाड्.र्गधरसंहिता (हिन्दी व्याख्या-जीवनप्रदा), चौखम्बा ओरियन्टालिया, वाराणसी, पुनर्मुद्रित संस्करण 2013, मध्यम खण्ड।
3. पण्डित परशुराम शास्त्री, शाड्.र्गधरसंहिता (दीपिका एवं गूढार्थदीपिका संस्कृत टीका), चौखम्बा ओरियन्टालिया, वाराणसी, पुनर्मुद्रित संस्करण 2012, मध्यम खण्ड।
4. सिद्धिनन्दन मिश्र, शाड्.र्गधरसंहिता (हिन्दी व्याख्या), चौखम्बा ओरियन्टालिया, वाराणसी, पुनर्मुद्रित संस्करण 2013, मध्यम खण्ड।
5. प्रो. के. आर. श्रीकान्त मूर्ति, शाड्.र्गधरसंहिता (अंग्रेज़ी व्याख्या), चौखम्बा ओरियन्टालिया, वाराणसी, पुनर्मुद्रित संस्करण 2017, मध्यम खण्ड।